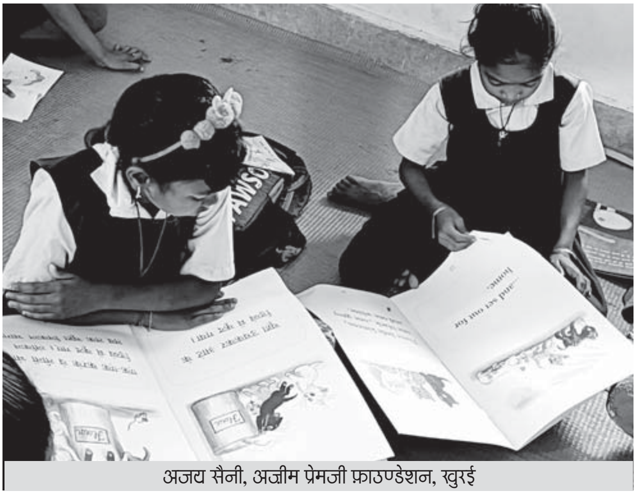
स्कूलबन्दी के दौर में सीखने की क्षति
चुनौतियाँ और भरपाई की कोशिशें

इस अंक के लिए संवाद का विषय है 'इस वर्ष स्कूल में सीखने के विभिन्न स्तरों पर चुनौतियाँ व सम्भव उपाय'। इस संवाद में हमारे साथ दीप्ति सिंह राठौर हैं। दीप्ति, छत्तीसगढ़ के एक माध्यमिक स्कूल में शिक्षिका हैं। दो साथी अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन से हैं, कैलाश कांडपाल और रुद्रेश एस.। कैलाश कांडपाल, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, झारखण्ड के राज्य प्रमुख हैं और रुद्रेश अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, कर्नाटक के राज्य प्रमुख हैं। *पाठशाला भीतर और बाहर* समूह के साथी गुरबचन सिंह, हृदय कान्त दीवान और रजनी भी इस संवाद का हिस्सा हैं। सं.

रजनी : सभी को नमस्ते। *पाठशाला* के इस अंक के लिए संवाद का विषय है– 'इस वर्ष स्कूल में सीखने के विभिन्न स्तरों पर चुनौतियाँ व सम्भव उपाय'।

हम सभी जानते हैं कि कोरोना के कारण हुई लम्बी तालाबन्दी के दौरान शिक्षण संस्थान बन्द रहे। इसका प्रभाव बच्चों के सीखने पर पड़ा है और इस दिशा में किए गए अध्ययन भी यह इंगित करते हैं कि बच्चे सभी विषयों में बहुत कुछ भूल गए हैं, माने सीखने की क्षति हुई है। यह भूलना / क्षति सभी स्तरों पर हुई है; प्राथमिक, माध्यमिक और सेकेंडरी स्तर पर भी। इस संवाद के ज़रिए सीखने में हुई क्षति और इससे सम्बन्धित पहलुओं को समझने की कोशिश है। सीखने की क्षति का क्या तात्पर्य है? विषयों के सन्दर्भ में इसे कैसे समझें? प्राथमिक, माध्यमिक और सेकेंडरी स्तर पर बच्चों को सीखने में किस तरह की दिक़्क़तें आ रही हैं। बच्चों को आमतौर पर सीखने में जो दिक़्क़तें आती हैं क्या ये उनसे ये फ़र्क़ हैं? किन मायनों में फ़र्क़ हैं? सीखने के स्तर में बेहतरी की दिशा में क्या प्रयास किए जा रहे हैं? इन प्रयासों से शिक्षकों और बच्चों को किस-किस तरह की मदद मिल रही है? इन प्रयासों में क्या ख़ास है? क्या ऐसे प्रयास नियमित और निरन्तर होने चाहिए?

बातचीत की शुरुआत मैं इस सवाल से करना चाहूँगी : सीखने की क्षति से क्या आशय है और हम इसे कैसे समझते हैं? दीप्ति आपसे शुरू करते हैं।



अजय सैनी, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, खुरई

दीप्ति : मेरी समझ है कि सीखने की क्षति को पाठ्यपुस्तकों व पढ़ाई के साथ-साथ अन्य बहुत-से क्षेत्रों में देख सकते हैं। कोरोना की वजह से बच्चे लगभग अठारह महीने से स्कूल से दूर रहे। उनकी पढ़ाई-लिखाई पर निश्चित तौर से असर हुआ ही है। बार-बार हर प्रशिक्षण, हर बैठक में यही बात निकलकर आ रही है कि जो सीखा था बच्चे वो भूल गए और आगामी सत्र में जो सीखना था वो सीख ही नहीं पाए। ये एक तरीक़े से लर्निंग लॉस हुआ, लेकिन मैं इस तरीक़े से भी देखती हूँ कि जब स्कूल खुले तो बच्चे काफ़ी उद्दण्ड हो चुके थे, स्कूल में एडजस्ट नहीं हो पा रहे थे, रुक नहीं पा रहे थे, स्टेबल नहीं हो पा रहे थे और आज भी कुछ-कुछ ऐसा ही है। ये भी एक तरह का लर्निंग लॉस ही है। अगस्त-सितम्बर में जब स्कूल खुले, तब बच्चों के स्कूल से जुड़ाव, स्कूल में सामंजस्य को लेकर बहुत दिक़्क़तें हुईं। पिछले साल की तुलना में इस साल मैं ज़्यादा अच्छा महसूस कर रही हूँ। अब बच्चे कुछ स्टेबल हुए हैं और पढ़ाई की तरफ़ उनका ध्यान भी लग रहा है जो बीते साल बिलकुल भी देखने को नहीं मिला था, तो मैं इस तरह से लर्निंग लॉस को देख पा रही हूँ।

> मेरी समझ है कि सीखने की क्षति को पाठ्यपुस्तकों व पढ़ाई के साथ-साथ अन्य बहुत-से क्षेत्रों में देख सकते हैं। कोरोना की वजह से बच्चे लगभग अठारह महीने स्कूल से दूर रहे। उनकी पढ़ाई-लिखाई पर निश्चित तौर से असर हुआ ही है। बार-बार हर प्रशिक्षण, हर बैठक में यही बात निकलकर आ रही है कि जो सीखा था बच्चे वो भूल गए और आगामी सत्र में जो सीखना था वो सीख ही नहीं पाए।

हृदय कान्त दीवान : दीप्ति, आप कह रही हैं अभी परिस्थिति बेहतर हुई है। क्या स्कूल की जो निरन्तरता बनी है उससे बच्चों में स्कूल में टिक कर बैठने, कक्षा में ध्यान केन्द्रित कर पाने जैसी आदतें वापस आ गई हैं?

दीप्ति : बहुत कुछ ठीक हुआ है। लगातार स्कूल आने से बच्चे स्कूल से जुड़ने लगे हैं। पर उनका जुड़ाव शिक्षकों व अभी वे बच्चों के साथ काम कैसे कर रहे हैं, उसपर भी निर्भर करता है।

रजनी : रुद्रेश, आपके विचार जानना चाहेंगे।

रुद्रेश : दो पहलू हैं, सीखने में पीछे रहना और सीखने में क्षति होना। इन पदों को हम अकसर अदल-बदल कर उपयोग करते हैं। पर ये दोनों अलग-अलग हैं। पढ़ाई में पीछे रहना, यह कोविड से पहले भी होता रहा, पहले भी ऐसी स्थितियाँ थीं और अभी भी यह होता है। लेकिन कोविड के कारण जो परिस्थितियाँ बनीं उनमें सीखने की क्षति हुई है।

क्योंकि वे बच्चे जो सीखने में पीछे नहीं थे, वे भी जो पढ़ा था उसमें से बहुत कुछ या सबकुछ भूल गए हैं। इसे इस दृष्टि से भी देख सकते हैं कि दो साल में जो सीखने के अवसर मिलने थे, वो नहीं मिले, इस वजह से भी क्षति हुई है।

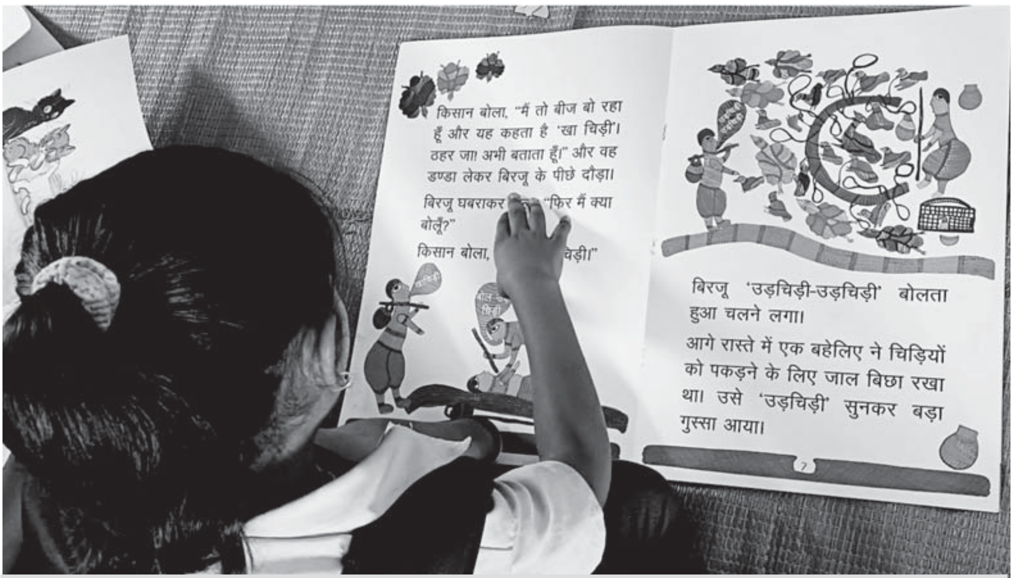
रजनी : शुक्रिया रुद्रेश। प्राथमिक और माध्यमिक स्तर जहाँ आप पढ़ाती भी हैं, उस स्तर पर किस तरह की सीखने की क्षति हुई है? यदि आप विषयों के उदाहरण देकर बता सकें।

दीप्ति : प्राथमिक स्कूल के शिक्षकों से हुई मेरी बातचीत के आधार पर, ख़ासकर कक्षा 3 और 4 के सन्दर्भ में, मैं कहूँगी कि पहली-दूसरी का बच्चा आज की तारीख़ में सीधे तीसरी-चौथी कक्षा में आ चुका है। इसका मतलब पहली-दूसरी कक्षा में जो चीज़ें उसे सीख लेनी चाहिए थीं उसने नहीं सीखी हैं, माने बुनियादी अवधारणाओं पर काम नहीं हुआ है। और वहीं

तीसरी का बच्चा पाँचवीं में आ गया है लेकिन तीसरी की अवधारणाओं को भी नहीं कर पा रहा है। माध्यमिक स्तर पर मेरा व्यक्तिगत अनुभव यह रहा कि कोरोना काल के तुरन्त बाद बच्चे जब कक्षा 6 में आए तब स्थिति बहुत ख़राब थी, अभी भी ज़्यादा अच्छी तो नहीं है लेकिन कुछ बेहतर है। विषय के उदाहरण दूँ तो, हिन्दी में बच्चों को अक्षर पहचानने में भी दिक़्क़त हो रही है। कुछ बच्चे अक्षर पहचानकर धीरे-धीरे शब्द पढ़ पा रहे हैं, लेकिन वाक्यों की संरचना करने में उन्हें दिक़्क़त है। पैराग्राफ़ राइटिंग या पैराग्राफ़ पढ़ने की बात करें तो दस में से एक या दो बच्चे ही पैराग्राफ़ या वाक्य पढ़ पा रहे हैं, वो भी थोड़ा रुक-रुक कर। मेरे विद्यालय में चालीस बच्चे हैं, बड़ी मुश्किल से पन्द्रह बच्चे ही हिन्दी पढ़ पाने में सक्षम हुए, किन्तु वो भी वाक्य को बहुत ज़्यादा नहीं समझ पा रहे थे। गणित में बच्चे संख्याओं को तो पहचान पा रहे थे लेकिन इकाई, दहाई या विस्तृत रूप में लिखना नहीं कर पा रहे थे।

रजनी : रुद्रेश, प्राथमिक और माध्यमिक स्तर पर बच्चे विषयों में क्या भूल गए हैं, इसपर आपके क्या अवलोकन रहे हैं?

रुद्रेश : हर विषय में अलग-अलग तरह की क्षति हुई है। मैं दीप्तिजी से पूरी तरह सहमत हूँ। प्राथमिक स्तर पर, कक्षा एक से तीन तक बच्चे स्कूल में नहीं आए। अभी-अभी लगभग दो महीने पहले से ही नियमित पढ़ाई शुरू हुई है। जो बच्चे स्कूल आए ही नहीं यह कह सकते है कि उनकी तो क्षति नहीं हुई। लेकिन इनके साथ अभी शुरू से ही काम करना है और दो साल का, तीन साल का, जो पाठ्यक्रम उनको सीखना है उसको अब एक साल में सिखाना है, यह बड़ी चुनौती है। कक्षा 4 और 5 में सीखने की क्षति का प्रभाव ज़्यादा महसूस होता है क्योंकि जो बच्चे अभी कक्षा 4 और 5 में हैं, स्कूल बन्द होने के वक़्त कक्षा 2 या 3 में थे। उस समय में उनकी बुनियादी कॉम्पीटेंसी पूरी नहीं हुई। फिर एक लम्बा अन्तराल हुआ तो भूल जाना स्वाभाविक है। कक्षा 4 और 5 में किया गया हालिया आकलन भी दर्शाता है कि लगभग 60 से 70 फ़ीसदी विद्यार्थी लिखने-पढ़ने और संख्या की बुनियादी क्षमताओं को भूल चुके हैं। सिर्फ़ 20-30 फ़ीसदी बच्चे ही, वो भी कुछेक स्कूलों में, कक्षा के अनुरूप कर पा रहे हैं। बुनियादी क्षमताओं को भूलना ज़्यादा भी है और गम्भीर भी, इसलिए इसपर ज़्यादा फ़ोकस की ज़रूरत है।



अजय सैनी, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, खुरई

माध्यमिक स्तर पर यह समस्या और गहरी हो गई है। जो बच्चे लिखने-पढ़ने और संख्या की बुनियादी क्षमता के लिए संघर्ष कर रहे थे, वो समस्या तो है ही, बल्कि यह और गहरी हो गई है, क्योंकि जो बच्चा ग्रेड एप्रोप्रीएट था, स्कूल बन्द होने के समय उसका ज़्यादा लर्निंग लॉस नहीं हुआ। उसे ज़्यादा सीखने का अवसर नहीं मिला इसलिए जो पिछले दो साल में एक्सपेक्टेड लर्निंग आउटकम अचीव करना था वो उसने नहीं किया क्योंकि अवसर नहीं मिला, वो भी एक चुनौती है। मसलन, जो विद्यार्थी अभी कक्षा आठ में है, उसके लिए विज्ञान कक्षा 6 में शुरू हुआ। कक्षा 6 में उसे विज्ञान का कोई एक्सपोज़र भी नहीं मिला और कक्षा 7 में भी नहीं। अभी वो कक्षा 8 में है। अब विज्ञान की जो कॉम्पीटेंसी उसे कक्षा 8 में सीखनी है वो नहीं सीख सकता है क्योंकि बुनियादी विज्ञान पढ़ने का उसको अवसर ही नहीं मिला और गणित में भी ऐसा ही है। जब वो कक्षा 8 में है तो कक्षा 6,7 और 8 प्रोग्रेशन में हैं और लर्निंग आउटकम एवं कॉन्सेप्ट अभी सिक्वेंस में हैं। जब उनके पास पहले के कॉन्सेप्ट सीखने का अवसर नहीं है या सीखने में असमर्थ हैं तो वे वर्तमान कक्षा 8 का कॉन्सेप्ट नहीं सीख सकते हैं क्योंकि वो बेसिक नहीं सीख पाए हैं, ये चुनौतियाँ हैं।

रजनी : कैलाशजी, दो प्रश्न हैं– सीखने की क्षति से क्या समझते हैं और विभिन्न विषयों के सन्दर्भ में इसे कैसे समझते हैं?

कैलाश : हमारी औपचारिक शिक्षा में एक तय करिकुलम के तहत बच्चे पढ़ते हैं। कोविड की वजह से जो परिस्थितियाँ बनीं, उनमें एक यह थी कि कुछ बच्चे पढ़ना-लिखना और संख्याओं को समझने लगे थे, लेकिन किसी अवधारणा पर आगे नहीं बढ़ पाए। दूसरा, बच्चों के पास पढ़ने-लिखने की बुनियादी क्षमताएँ ही नहीं थीं। ये क्षमताएँ प्रस्थान बिन्दु हैं और बच्चे को सीखने में आत्मनिर्भर भी बनाती हैं।

हमारी औपचारिक शिक्षा में एक तय करिकुलम के तहत बच्चे पढ़ते हैं। कोविड की वजह से जो परिस्थितियाँ बनीं, उनमें एक यह थी कि कुछ बच्चे पढ़ना–लिखना और संख्याओं को समझने लगे थे, लेकिन किसी अवधारणा पर आगे नहीं बढ़ पाए। दूसरा, बच्चों के पास पढ़ने–लिखने की बुनियादी क्षमताएँ ही नहीं थीं। ये क्षमताएँ प्रस्थान बिन्दु हैं और बच्चे को सीखने में आत्मनिर्भर भी बनाती हैं।

रजनी : दो साल की पाठ्यचर्या / विषयवस्तु को एक साल में कैसे सिखाएँगे? क्या ये सिखाना जायज़ भी है? और अगर ये करना ही है तो क्या तरीक़े होंगे, किस तरह की बातचीत करनी होगी?

दीप्ति : एक साल में हर बच्चे को उसके अपेक्षित स्तर तक ले जा पाएँगे ऐसा तो नहीं कह सकती, लेकिन एक हद तक उनके स्तर को बेहतर करने का प्रयास किया जा सकता है ताकि वो अधिकतम काम कर पाएँ। मैं अपनी कक्षा का उदाहरण लूँ तो बच्चे स्कूल आएँ, स्कूल में रहें इसलिए हमने दो दिन का एक कैम्प रखा। उसमें कई प्रतियोगिताएँ, खेलकूद और खाने-पीने की व्यवस्था भी थी। बाल दीवार पत्रिका, कहानी कहना आदि पर काम करने से बच्चे नियमित होने लगे और सीखने में भी उनकी प्रगति दिखाई दे रही है। अभी मैं बच्चों के साथ पढ़ना सीखने पर काम कर रही हूँ। छत्तीसगढ़ में पिछले साल एक योजना के तहत काफ़ी पुस्तकें मिडिल स्कूलों को मिलीं। अभी मैं उनको किताबें पढ़ने के लिए देती हूँ, पढ़ने के बाद हर बच्चा अपनी समझ को ख़ुद प्रेजेंट करता है। ज़ाहिर-सी बात है, यदि बच्चा पढ़ना सीख रहा है तो

वो उसमें लिखी हुई चीज़ों को भी अपने अनुसार बोल पाएगा। मुझे यह भी पता चला कि कितने बच्चे पढ़ पाने में सक्षम हैं और मुझे किनपर व किस तरह का काम करने की आवश्यकता है।

रजनी : रुद्रेश, दो साल के विषय को एक साल में कैसे सिखाएँ?

रुद्रेश : दो साल और यह साल, कुल मिलाकर तीन साल का पाठ्यक्रम एक साल में पूरा करना है। यह चुनौतीपूर्ण है, और जो तरीक़े हम अपनाते आए हैं उनसे कर्नाटक में जो किया गया है वह बताना चाहूँगा। यहाँ एक रिफ़र्बिश्ड करिकुलम बनाया गया है। इसे बनाने का एक मुख्य आधार था उन अवधारणाओं और कौशलों को जगह देना जो सीखने के लिए अत्यन्त ज़रूरी हैं। जैसे– बुनियादी पढ़ने-लिखने की क्षमताओं, संख्या की समझ, आदि पर काम करना। और यह हर कक्षा में होना था। ऐसे प्रयास अन्य राज्यों में भी हुए हैं।



पारुल बत्रा, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन

कैलाश : मेरा मानना है कि जो क्षति हुई है उसकी पूरी भरपाई एक साल में नहीं की जा सकती। हाँ, इसे कम करने की कोशिश की जा सकती है, लेकिन कितनी भरपाई हो पाएगी इसमें भी संशय ही है। रिफ़र्बिश्ड करिकुलम क्या है, इसका क्या विचार है, ये मेरी समझ से बाहर है। ये तो डैमेज कंट्रोल जैसा लगता है। कोई डैमेज हो चुका अब आप उस डैमेज को कैसे कम कर सकते हो। लेकिन ये तो सम्भव ही नहीं है कि तीन वर्षों का सीखना एक साल में पूरा हो जाए, और वैसे ही हो पाए जैसा यह तीन साल में होता। जो काम राज्य सरकारें कर रही हैं उससे शायद इस क्षति को मिनिमाइज़ कर पाएँगे, तब भी ये कितना हो पाएगा और कितना नहीं, ये चैलेंजिंग है। फिर रिफ़र्बिश्ड करिकुलम को टीचर्स कितना आत्मसात कर पाते हैं यह भी सवाल है।

रजनी : अभी तक की बातचीत से जो दो-तीन बिन्दु आए हैं कि फ़ोकस फ़ाउण्डेशनल लिटरेसी और न्युमेरेसी पर होना चाहिए।

प्राथमिक स्तर पर पढ़ाने-लिखाने का काम करेंगे तो यह समाज में और अभिभावकों की जो अपेक्षाएँ हैं उससे भी मेल खाएगा। लेकिन उच्च माध्यमिक और सेकेंडरी लेवल पर पढ़ना-लिखना सीखने-सिखाने और गणित की बुनियादी अवधारणाओं की समझ बनाने के लिए कैसे समय निकालें और कैसे उस करिकुलम में उसको एडजस्ट करें?

कैलाश : फ़ाउण्डेशनल लिटरेसी और न्युमेरेसी प्राइमरी में तो वैसे ही कोर्स का इन्टीग्रल पार्ट हैं। अपर प्राइमरी और सेकेंडरी में दो आस्पेक्ट्स होते हैं, एक तो फ़ाउण्डेशनल लिटरेसी और न्युमेरेसी का है और साथ में दूसरी अवधारणाएँ हैं जिनके माध्यम से पढ़ने-लिखने की शुरुआत भी होती है और पढ़ने-लिखने से यह अवधारणाएँ समझ भी आती हैं। क्योंकि जब पढ़ना सीखेगा तब ही वो कॉन्सेप्ट समझेगा। भाषा कॉन्सेप्ट में गुँथी हुई होती है। मेरा प्रस्ताव ये है कि अपर प्राइमरी और सेकेंडरी लेवल में भी बुनियाद यही है। एक बार अगर आपको पढ़ना आ गया तो आपकी यात्रा शुरू हो जाती है फिर आप रुकते नहीं हो। अपर

प्राइमरी है, सेकेंडरी है, उसमें जो मुद्दा है वो जिसको मैं सनातन कहूँगा जो पहले से ही है और अभी भी है। इसको नज़रअन्दाज़ नहीं करना चाहिए, कोई स्टूडेंट ऐसा है जिसके पास फ़ाउण्डेशनल लिटरेसी, न्युमेरेसी नहीं है तो उसपर आपको पहले काम करना ही पड़ेगा क्योंकि उसको करे बग़ैर आगे बढ़ा ही नहीं जा सकता है। अगर उसको फ़िज़िक्स समझनी है, विज्ञान का कोई विषय समझना है, तो भाषा भी समझनी होगी गणित भी समझनी होगी।

रजनी : रुद्रेश, इस पर आपके विचार क्या है?

रुद्रेश : उच्च प्राथमिक कक्षाओं में भी 30 फ़ीसदी बच्चे तो ऐसे होते ही हैं जिन्हें बुनियादी गणितीय अवधारणाएँ और पढ़ना-लिखना नहीं आता। हमने पाया कि कुछ शिक्षकों ने ऐसे बच्चों के साथ काम करने के लिए स्कूल के बाद कुछ समय रखा है। कुछ शिक्षक कक्षा में ही बच्चों के लिए अलग-अलग तरह की गतिविधियाँ कर रहे हैं ताकि वे पढ़ना सीख पाएँ। मुझे लगता है कि इन बुनियादी दक्षताओं को सीखने में बच्चों को यदि 6-7 महीने भी लगे तो वह समय हमें देना चाहिए क्योंकि तभी वे आगे सीख पाएँगे। इसके अलावा, हर स्तर पर कक्षाओं में ऐसे तरीक़े हम काम लें जिनमें बच्चे ज़्यादा-से-ज़्यादा गतिविधियों, चर्चाओं में शामिल हों, भाग लें, सोचें। क्योंकि इन दो सालों में बच्चों की पढ़ाई-लिखाई में दिलचस्पी कम हुई है, कक्षा में ध्यान केन्द्रित करने की आदत भी खो-सी गई है।

बच्चे स्कूल आएँ, स्कूल में रहें इसलिए हमने दो दिन का एक कैम्प रखा। उसमें कई प्रतियोगिताएँ, खेलकूद और खाने-पीने की व्यवस्था भी थी। बाल दीवार पत्रिका, कहानी कहना आदि पर काम करने से बच्चे नियमित होने लगे और सीखने में भी उनकी प्रगति दिखाई दे रही है। अभी मैं बच्चों के साथ पढ़ना सीखने पर काम कर रही हूँ।

रजनी : शुक्रिया रुद्रेश। दीप्ति, आप उच्च प्राथमिक शिक्षा स्तर पर बच्चों के साथ कैसे काम हो, इसपर कुछ जोड़ना चाहेंगी?

दीप्ति : हर विषय में, चाहे वो गणित हो, सामाजिक विज्ञान या विज्ञान, भाषा तो होती ही है। अतः बच्चों के साथ पढ़ने-लिखने पर काम करना तो बेहद ज़रूरी है। अगर बच्चा पढ़ना सीख गया है तो वो सबकुछ कवर कर लेगा, ऐसा मेरा मानना है। वे कुछ बच्चे जो पढ़ना जारी रख पाए थे, ऑनलाइन क्लास के ज़रिए या परिवार के सदस्यों के ज़रिए, और ऐसा करके जो पढ़ना सीख गए थे, भूले नहीं थे कुछ जल्दी सीख पा रहे हैं। जो बिलकुल ध्यान नहीं दे पाए, कहीं नहीं जुड़ पाए उनका स्तर अलग है। हम तीन साल का करिकुलम पूरा नहीं कर पाएँगे, लेकिन भाषा, ख़ासकर पढ़ना सिखाने, को ध्यान रखना होगा ताकि वो धीरे-धीरे ख़ुद पढ़कर समझने की ओर आगे बढ़ें।

रजनी : सरकार द्वारा लर्निंग लॉस की पूर्ति के लिए कई कार्यक्रम शुरू किए गए हैं, संक्षिप्त में इनके बारे में बताएँ, और यह भी कि इन कार्यक्रमों में फ़ाउण्डेशनल लिटरेसी व न्युमेरेसी के लिए कितनी जगह है?

रुद्रेश : कर्नाटक सरकार ने 'कलिके क्षेत्र' नाम का कार्यक्रम शुरू किया है। इसमें तीन भाग हैं : एक पढ़ने-लिखने की बुनियादी क्षमता, दूसरा पिछले दो साल के मुख्य अधिगम प्रतिफल, और तीसरा मौजूदा वर्ष के मुख्य अधिगम प्रतिफल। शायद इन तीनों पर काम करने से अगले वर्ष



अजय सैनी, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, खुरई

बच्चा कक्षा के स्तर के अनुरूप पहुँच सके। यह भी कि हर कक्षा के हिसाब से फ़ोकस में कुछ अन्तर भी है, यानी कक्षा एक से तीन में बुनियादी पढ़ने-लिखने और संख्या ज्ञान पर फ़ोकस है। कक्षा 4 और 5 में इसके साथ-साथ ज़रूरी अधिगम प्रतिफलों को भी रखा गया है। 2-3 महीने तक पढ़ने-लिखने पर ज़्यादा ज़ोर और फिर पढ़ने-लिखने के साथ-साथ चिह्नित अधिगम प्रतिफलों पर काम। कक्षा 6 से 8 में भी कुछ ऐसा ही है। इसमें भी शुरुआत में पढ़ने-लिखने पर ही फ़ोकस है। बच्चों के लिए वर्कशीट और शिक्षकों के लिए मैनुअल भी बनाया गया है।

रजनी : दीप्तिजी, छत्तीसगढ़ के सन्दर्भ में क्या हुआ है?

दीप्ति : छत्तीसगढ़ में 'नवा जतन प्रोग्राम' चल रहा है। इसमें सबसे पहले बच्चों का आकलन करना है, इस काम का मुख्य उद्देश्य बच्चों के स्तर को जानना है। जैसे— हिन्दी भाषा में कुछ बच्चे अभी अक्षर ज्ञान पर हैं यानी कुछ अक्षर पहचान लेते हैं, लेकिन शब्दों को तोड़-तोड़ कर पढ़ रहे हैं। कुछ बच्चे वाक्य को, अनुच्छेद को समझ पाते हैं। इसी तरह गणित में हमने पाया कि बच्चों को संख्या का ज्ञान है, एक अंक और दो अंकों का जोड़कर पा रहे हैं, आदि। दूसरा फ़ोकस है कि कक्षा में पीयर लर्निंग हो, समूह काम हो और बच्चे एक दूसरे से सीखें। पीयर लर्निंग पर छत्तीसगढ़ प्रशासन ने एक आदेश भी जारी किया है कि पीयर लर्निंग और ग्रुप लर्निंग प्रत्येक स्कूल को करनी ही है, क्योंकि इसका लाभ मिल ही रहा है। हालाँकि, हर शिक्षक अकेले ही इसको कर ले ऐसा सम्भव नहीं, क्योंकि बहुत-से स्कूलों में बच्चों के अनुपात में शिक्षकों की संख्या बहुत कम है। वहाँ शायद दिक़्क़त हो। लेकिन यदि 20-25 बच्चे हैं कक्षा में तो शिक्षक 5-5 के 4-5 समूह बनाकर काम कर सकते हैं। और हाँ, पाठ्यपुस्तक पूरा करवाने के बजाय, पढ़ने-लिखने और अन्य ज़रूरी सीखने के प्रतिफलों पर ध्यान देना होगा।

रजनी : कैलाशजी, इन प्रयासों को लेकर आपके विचार।

कैलाश : कर्नाटक की तर्ज़ पर उत्तराखंड में 'विद्या सेतु' नामक कार्यक्रम चल रहा है। इसमें शिक्षकों के लिए मैनुअल भी है, बच्चों के लिए वर्कशीट भी, और यह हर विषय के लिए बनाई गई हैं। इन सबको काम में कैसे लेना है इसपर शिक्षकों के प्रशिक्षण भी हुए हैं। इसकी रणनीति ऐसी बनी है कि पूरे सत्र में इसके अनुसार ही काम होगा, आकलन, मूल्यांकन सब इसी आधार

पर होंगे। और यह सामग्री, जिसे रिफ़र्बिश्ड करिकुलम कह रहे हैं, पाठ्यपुस्तकों को ध्यान में रखकर बनाई गई है तो बच्चे और शिक्षक इससे जुड़ भी पाएँगे। यहाँ भी फ़ाउण्डेशनल लिटरेसी व न्युमेरेसी पर ज़ोर है। बच्चे को अगर पढ़ना-लिखना ही नहीं आए तो उसके लिए हमें क्या करना है, इस तरह की बातचीत भी इसमें है। अभी पूरे देश में 'निपुण भारत' कार्यक्रम चल रहा है। यह भी फ़ाउण्डेशनल लिटरेसी व न्युमेरेसी से ही सम्बन्धित है।

हृदय कान्त दीवान : दो सवाल हैं। दीप्ति ने रेखांकित किया कि अगर पढ़ना आ गया, बुनियादी गणित आ गई तो आगे की चीज़ करने में उसको बहुत दिक़्क़त नहीं होगी। ये बात *राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020* भी कहती है। लेकिन जब भी हम बुनियादी भाषा क्षमता और संख्या क्षमता की बात करते हैं तो यह बहुत स्पष्ट नहीं होता कि उसमें क्या-क्या शामिल है? जो करिकुलम बने हैं, जब शिक्षकों के साथ बात कर रहे हैं, इनमें इस विषय पर चर्चा हो पा रही है या नहीं? दूसरा, ये जो करिकुलम बने हैं इनको लागू करने में सबसे बड़ी चुनौतियाँ क्या आप लोगों को दिखाई देती हैं? ये हो पाएगा या नहीं हो पाएगा, हो पा रहा या नहीं, और नहीं तो क्यों?

कैलाश : मेरा मानना है कि पढ़ने-लिखने और संख्या ज्ञान की बुनियादी क्षमताओं की बात सीखने-सिखाने की प्रक्रिया पर चर्चा के बग़ैर नहीं हो सकती। प्रक्रिया से आशय है भाषा और गणित सिखाने की शुरुआत किस ढंग से हो? इससे पहले यह तो होना ही होगा कि हम समझ लें कि बच्चे को क्या-क्या आता है? बच्चे की समझ और तब आगे की पूरी प्रक्रिया के बारे में विचार करता हूँ तो कुछ चुनौतियाँ हैं। एक ओर तो सीखने-सिखाने की प्रक्रिया की हर शिक्षक की अपनी समझ है। दूसरा यह भी कि हर कक्षा, और फिर हर स्तर के हिसाब से भी यह प्रक्रिया फ़र्क़ होगी। शिक्षणशास्त्र की समझ तो यही कहती है कि बच्चे भाषा को टुकड़े-टुकड़े में नहीं सीखते। वे भाषा की समग्र समझ बनाते हैं, और तब उनके साथ अक्षर, मात्रा, शब्द, वाक्य आदि में से जिसपर भी हम काम करना चाहें, कर सकते हैं। लेकिन इसमें भी कई दुविधाएँ सामने आ जाती हैं। क्योंकि कोई कहता है, और मानता भी है कि अक्षर से शुरू करना ज़रूरी है या बारहखड़ी ज़रूरी है। लेकिन मेरा मानना है कि भाषा मौखिक होती है, माने भाषा का मसला बोलने का मसला है, और बच्चे बोलना, अपनी बात कहना सीख जाते हैं। वे अक्षर और बारहखड़ी नहीं बोलते, लम्बे-लम्बे वाक्य बोलते हैं। पहली बात यह है कि पढ़ाने वाले सीखने की प्रक्रिया और सीखने के मसौदे को कैसे समझते हैं? और तब कक्षा में कैसे पढ़ाते हैं? दूसरी चुनौती मुझे ज़्यादा बड़ी लगती है, वह यह कि शिक्षकों को यह बातें व प्रक्रिया के मुख्य पहलू समझ आएँ। इसके लिए कई कोशिशें हुईं और हो भी रही हैं, लेकिन कितने शिक्षक इसे आत्मसात कर पाए हैं इसपर प्रश्न चिह्न है। कुछ शिक्षक समझे भी हैं, लेकिन कुछ अन्य अभी भी इसकी सराहना नहीं कर पाते। वे यह मानकर ही चल रहे हैं कि बच्चों का न सीख पाना एक सनातन समस्या है, और यह बनी रहेगी। और क़रीब से देखें तो शिक्षक ही नहीं, पूरे शिक्षा तंत्र को यह सनातन समस्या लगती है। मुझे लगता है जब हम अलग-अलग तरीक़ों से इसपर काम करेंगे तो कुछ बदलाव तो होगा ही। मसलन, यदि एनसीईआरटी व डाइट को बाध्य कर दें कि स्कूल में आकलन रिफ़र्बिश्ड करिकुलम के आधार पर ही होगा तो डाइट व स्कूल दोनों में ही बदलाव आ सकता है।

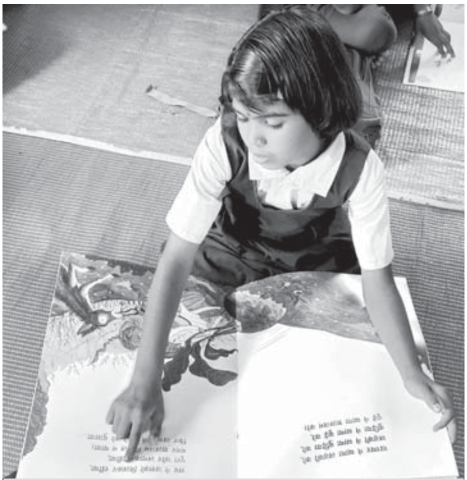
रुद्रेश : आज भी विद्यालयों में भाषा सिखाने की प्रक्रिया पारम्परिक ही है, और ये सभी राज्यों में है। यहाँ कर्नाटक में 'नली कली' कार्यक्रम के तहत फ़ोनिक तरीक़ा अपनाया जाता है। अब यह तरीक़ा उच्च प्राथमिक और सेकेंडरी स्तर के बच्चों के साथ तो काम में नहीं ले सकते, क्योंकि उनकी क्षमता कहीं अधिक है। वैसे मुझे लगता है प्राथमिक स्तर पर भी अधिक ही होती है। ख़ूब सारी कहानियाँ, कविताएँ सुनकर-सुनाकर बच्चे ज़्यादा सीखते हैं, लेकिन उनके साथ इनपर ज़्यादा-से-ज़्यादा बात हो पाए यह एक चुनौती है। अभी रिफ़र्बिश्ड करिकुलम में भी ज़ोर वर्ण,

ध्वनि, शब्द, वाक्य सिखाने पर ही है। चुनौती यह भी है कि रिफ़र्बिश्ड करिकुलम को शिक्षक वैसे ही समझ पाएँ जैसे इसे बनाया गया है। वे इसकी अप्रोच को, मूल को समझ पाएँ। एक साझा समझ बने, इसके लिए कार्यशालाएँ हुईं, लेकिन कितना समझा गया यह प्रश्न है। दी गई वर्कशीट करवाना, गतिविधियाँ करवाना, अधिगम प्रतिफल को ध्यान में रखना, यह चुनौतियाँ हैं। बच्चे ख़ुद वर्कशीट करें, लेकिन वो एक दूसरे की देखकर कर रहे हैं और शिक्षक मैनुअल नहीं पढ़ रहे। यह भी चुनौती है कि बनाई गई सामग्री शिक्षकों और बच्चों तक पहुँच ही नहीं पा रही।

दीप्ति : छत्तीसगढ़ में नवाजतन कार्यक्रम चल रहा है। लेकिन नवाजतन की ट्रेनिंग को कितने टीचर्स ने गम्भीरता से लिया, कितनों ने वहाँ उस ट्रेनिंग को सुना और उनकी उन चीज़ों को लेकर कितनी समझ बनी, अभी हमारे यहाँ भी इसको लेकर क्लस्टर मीटिंग चल रही हैं। नवाजतन की चीज़ों को क्लस्टर के रूप में किया जा रहा था ताकि हर माह इसकी बैठक हो सके और पर्सनली टीचर को उस सब्जेक्ट को लेकर गाइड, मतलब सपोर्ट, किया जा सके यदि किसी तरीक़े से कोई ट्रेनिंग छूट जाए तो। पढ़ाने का तरीक़ा भी काफ़ी समय से परम्परागत चल रहा है कि जब तक बच्चा अक्षर नहीं समझेगा वो शब्दों को कैसे समझेगा? लेकिन मैं भी इस बात से सहमत हूँ कि भाषा की शुरुआत बोलने से ही होती है। इसमें कहीं अलग-अलग वर्णों और बारहखड़ी की कोई भूमिका नहीं होती। लेकिन स्कूल में शुरुआत अक्षरों से, शब्दों से ही होती है। यह मानने में काफ़ी दिक़्क़त होती है, इसके बावजूद कि वो बच्चे को तमाम सन्दर्भों में भाषा का उपयोग करते हुए देखते हैं, तब भी सीखना अक्षर और मात्रा ही होता है, यह सबसे बड़ी चुनौती है। कई प्रशिक्षणों में शिक्षक पूछते हैं कि बच्चे को अक्षर ज्ञान नहीं है तो शब्द कैसे सिखाएँ? लेकिन इस बात पर किसी का ध्यान नहीं जाता कि वह शब्द क्या पूरे-पूरे वाक्य बोलता है। क्या उन्हीं पर उसका ध्यान नहीं दिलाया जा सकता? हम शिक्षकों को अपना नज़रिया बदलना होगा और यह सम्भव भी है।

रजनी : शुक्रिया दीप्ति।

गुरबचन : मेरा सवाल यह है कि शिक्षक की तैयारी को इन परिस्थितियों और सन्दर्भ में कैसे देखते हैं?


अजय सैनी, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, खुरई

कैलाश : शिक्षक की तैयारी के सन्दर्भ को दो तरीक़ों से देखा जा सकता है। रिफ़र्बिश्ड करिकुलम बनाया गया है, साथ ही शिक्षक मैनुअल भी, और इसपर शिक्षकों से बात भी हुई है। इसके क्रियान्वयन की प्रक्रिया में यह ध्यान रखा गया है कि बुनियादी बिन्दुओं पर अलग-अलग तरह से बात हो। समूह बने हैं, और उनमें सभी कार्यकर्ता, डाइट के सदस्य, डीईओ, सीईओ, शिक्षक सभी जुड़े हैं। पहले मल्टीपल डायरेक्शन से जो बातें आती थीं वे अलग-अलग होती थीं, तो अब एक-सी बात जा रही होगी। तो एक तो सिनर्जी को एन्श्योर करने की कोशिश की हमने। इसके अलावा, अलग-अलग मंचों पर महीने में 2-3 बार वेबिनार सत्र भी आयोजित कर रहे हैं। साथ ही यह तय किया कि जितनी भी गतिविधियाँ होंगी, एक्टिविटी रिकवरी ऑफ़ लर्निंग लॉस और रिफ़र्बिश्ड करिकुलम से जुड़ी होंगी। ये दो तरीक़ों से है एक तो एडवोकेसी और दूसरा ये मंच बनाए हैं।